आर्य वन्दना

ओ३म्

मूल्य ९ रूपये

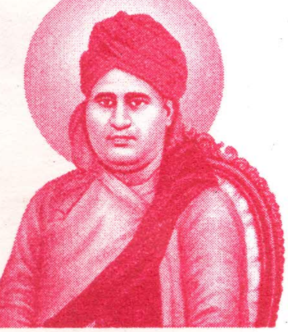

हिमाचल प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा का मुख पत्र

स्वामी सुमेधानन्द जी सरस्वती

आर्यो के प्राण स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज स्व० स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज का जीवन सदा ही आर्य जाति के उत्थान, राष्ट्र कल्याण तथा गरीबों की सहायता में बीता। चम्बा जैसे इलाके में जो काम स्वामी जी महाराज ने किया है उसकी कल्पना करना असम्भव है। जब वे चम्बा में आए तो उस समय चम्बा जैसे निष्प्राण सा था। उन्होंने अपने अथक प्रयास व अपनी तपस्या व साधना से इसे भारत के पटल पर सुशोभित करवाया।

जब कभी भी आर्यजनों से बातचीत होती है तो उनका कहना है कि स्वामी जी महाराज ने जिस गति से मठ की उन्नति की है उस तरह कोई नहीं कर सकता। मठ में जिन विशाल भवनों का निर्माण हुआ है उस तरह और जगह कम ही मिलता है। स्वामी सदानन्द जी अध्यक्ष दयानन्द मठ दीनानगर के शब्दों में कहूँ तो उनका कहना था कि इतना बड़ा साम्राज्य तथा इतने कमरे तो दीनानगर मठ में भी नहीं हैं।

स्वामी जी महाराज का प्रचार क्षेत्र सम्पूर्ण उत्तर भारत था। चम्बा में रहते हुए उन्होंने आर्य सार्वदेशिक सभा का भी नेतृत्व किया था। डीएवी जैसी संस्थाओं के भी वे अध्यक्ष रहें। हि. प्र. आर्य प्रतिनिधि सभा तो सदा उनके आशीर्वाद से ही कार्य करती थी। उन्होनें कभी भी पद की लालसा नहीं की। परन्तु कर्मयोगी होने के नाते वे अपने कर्मों से ही सब प्राप्त करते थे। स्वामी जी महाराज आर्य जगत् में सूर्य की तरह चमके थे। चम्बा से पूरे आर्य जगत् का नेतृत्व करना उनकी ही सामर्थ्य था। उनको कई बार यह भी कहा गया कि आप दिल्ली में ही रहो। यहां से आपको सुविधा रहेगी। परन्तु उन्होंने अपनी कर्मभूमि चम्बा कभी नहीं छोडी।

आर्य जगत् में उनकी बात को कोई भी नहीं टालता था। स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनन्य भक्त स्वामी सर्वानन्द जी को अपना गुरु मानने वाले स्वामी जी महाराज सदैव आर्यों के उत्थान में लगे रहते थे। उनकी वाणी, उनकी लेखनी में इतना दम था कि वे किसी को भी प्रभावित कर सकते थे। राजनेता भी उनसे आशीर्वाद लेने आते थे परन्तु वे सदा राजनीति से दूर रहें।

ब्रह्मनिष्ठ स्वामी जी महाराज का सर्वप्रिय मंत्र गायत्री था। उनका कहना था कि मैं जो कुछ भी हूँ यह मां गायत्री का आर्शीवाद है। वे प्रातः ३ बजे उठते थे नित्य प्रति गायत्री का जाप करते थे। उन्होंने सवा करोड़ गायत्री मंत्र का अनुष्ठान किया था। जिसमें क्विंटलों के हिसाब से घी और सामग्री का प्रयोग किया था। वे योगी के साथ–साथ हठ योगी भी थे। जब एक बार ठान लिया कि मैंने यह करना हैं तो फिर सुनते कम ही थे।

जब उन्होनें एक वर्ष यज्ञ करने का निश्चय किया तो कहा कि मैं मठ के गेट से बाहर कदम नहीं रखूगा। किसी से भी चंदा नहीं मांगूगा। मुझे ईश्वर के ऊपर भरोसा है। वह मेरी कामना पूर्ण करेगा। "आचार्य महावीर जी चिन्तित हुए क्योंकि उनका भी योगदान कम नही है। स्वामी जी ने कहा जैसे मानो अभी कह रहे हो महावीर तू चिन्ता क्यों करता है। सुमेधानन्द के ऊपर मां गायत्री की कृपा है, सब कुछ ठीक हो जाएगा।"

आचार्य जी भी सदा स्वामी जी के सामने कुछ नहीं बोलते थे। उन्होंने भी ठीक है कहा और हंसते मुस्कराते हुए चुप हो गए। गुरु शिष्य की परम्परा में आचार्य महावीर जी बिल्कुल खरे उतरे। अन्तिम समय तक उन्होंने स्वामी जी महाराज को निराश नहीं किया।

स्वामी जी का स्वास्थ्य बिगड़ चुका था और उनका कहना था कि शारद यज्ञ होना चाहिए। मैं रहूं या न रहूं शारद यज्ञ नहीं रुकना चाहिए। इस तरह पूज्य स्वामी जी महाराज का भारतीय संस्कृति के उत्थान के लिए अपना सर्वस्व लगा दिया था। अन्त में उन्हें सच्ची श्रद्धांजली अर्पित करते हुए शत–शत नमन्।।

–कैलाश चन्द शास्त्री, स्नातक, दयानन्द मठ चम्बा

यह अंक दयानन्द मठ चम्बा के सौजन्य से प्रकाशित किया गया तथा आगामी अंक आर्य समाज कुल्लू के सौजन्य से प्रकाशित किया जाएगा।

अंक : १०८वां   विक्रमी सम्वत् २०७३   सृष्टि सम्वत् १९६०८५३११७   अगस्त २०१६

स्मृति दिवस का आमन्त्रण

अथैदं भस्मान्तम्शिराम् – शरीर चाहे राजा का हो या रंक का, योगियो का हो भोगियो का, महान आत्माओं का हो या दुरात्माओं का, इसने एक ना एक दिन भस्म होना ही हैं। इसलिए उस प्रभू को याद करो। अपने कर्मों को याद करो।

रहती हैं आखें नम जिनकी याद में
प्रपञ्च उन्हीं की याद को मनाने का कर रहे हैं
हृदय वाटिका से चुन भावों के पुष्पों को
आओ श्री चरणों में आज बिखेर दें
गगरिया सी नयनों से बहा के नीर निर्मल
पाद पंकजों को पखारे चलो आज कुछ पल

प्रिय सज्जनों – आखिर वह दिन भी आ गया है। जिस दिन पूज्य चरण हम सब से विदा होकर दिव्य लोकों को चले गए थे। ५ अगस्त २०१५ को पूज्य स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज हमारी दुनिया से अनन्त की ओर प्रस्थान कर गए थे। ५ अगस्त २०१६ को हम लोग स्मृति दिवस के रुप में मना रहे हैं। ३, ४ और ५ इन तीन दिनो का कार्यक्रम है। ३ ,४ अगस्त को प्रातः ७ से १० बजे तक और ५ अगस्त को सुबह ८ बजे से १ बजे तक यज्ञ उपदेश व भजनों के माध्यम से इस दिवस को मनाऐंगें। और श्री चरणों की कृतित्व व व्यक्तित्व पर सिंहावलोकन करेगें। अन्तीम दिन लंगर के साथ इस कार्यक्रम का समापन करेगें। आओ हम सब इस दिवस पर सम्मिलित रुप से उस महापुरुष को याद करें।

विनीत : आचार्य महावीर सिंह एवं
प्रबन्ध समिति दयानन्द मठ चम्बा (हि.प्र.)

आर्य वन्दना शुल्क : वार्षिक शुल्क : ₹100, द्विवार्षिक शुल्क : ₹ 160, त्रैवार्षिक शुल्क : ₹ 200 आप शुल्क हि. प्र. स्टेट को–आपरेटिव बैंक लिमिटेड, सुन्दरनगर शाखा (खाता संख्या : 32510115356 आर्य वन्दना) में भी जमा करवा सकते हैं।

मुख्य संरक्षक	: रोशन लाल बहल, आर्य प्रतिनिधि सभा, हि. प्र., मोबाइल : 94180–71247
परामर्शदाता	: 1. रत्न लाल वैद्य, आर्य समाज मण्डी, हि. प्र. मोबाइल : 94184–60332 2. सत्यपाल भटनागर, प्राचार्य, आर्य आदर्श विद्यालय, कुल्लू मोबाइल : 94591–05378
विधि सलाहकार	: प्रबोध चन्द सूद (एडवोकेट), प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, हि. प्र. मोबाइल : 94180–20633
सम्पादक	: कृष्ण चन्द आर्य, महर्षि दयानन्द मार्ग, आर्य समाज, सुन्दरनगर (खरीहड़ी), जिला मण्डी (हि. प्र.) पिन 175019 मोबाइल : 94182–79900
मुख्य प्रबन्ध–सम्पादक	: विनोद स्वरूप, कांगड़ा कालौनी, डा. कनैड, तह. सुन्दरनगर, जिला मण्डी (हि. प्र.) पिन 175019 मोबाइल : 94181–54988
प्रबन्ध–सम्पादक	: माया राम, गांव चुरढ़, सुन्दरनगर मोबाइल : 94184–71530
सह–सम्पादक	: 1. राजेन्द्र सूद, 106, ठाकुर भ्राता, लोअर बाजार, शिमला 2. मनसा राम चौहान, आर्य समाज, अखाड़ा बाजार, कुल्लू मोबाइल : 94599–92215
मुद्रक	: प्राईम प्रिंटिंग प्रैस, शहीद नरेश कुमार चौक, सुन्दर नगर, (हि. प्र.) 175019
नोट	: लेखकीय विचारों से सम्पादकीय व प्रकाशकीय सहमति आवश्यक नहीं है।

सम्पादक, मुद्रक एवं प्रकाशक कृष्ण चन्द आर्य ने हिमाचल आर्य प्रतिनिधि सभा के लिए छपवाकर आर्य समाज, महर्षि दयानन्द मार्ग, खरीहड़ी (सुन्दरनगर) से प्रकाशित किया।

सम्पादकीय

हिमाचल प्रदेश के दयानन्द मठ चम्बा के दो महान सपूत इस नश्वर संसार को सदा और सर्वदा के लिए छोड़कर प्रभु के व्यवस्था में समा गए। मई २०१५ को दयानन्द मठ चम्बा के वर्तमान सम्पादक श्री महावीर और उनकी धर्मपत्नी सरस्वती देवी जी के लाडले पुत्र ऋषि कुमार ने सभी प्रिय लोगों को अलविदा करके माता–पिता के इच्छाओं को आशा और आकाक्षाओं के अधूरा छोड़कर विदा हो गए। उसके लगभग तीन मास बाद इस मठ के संचालक स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज भी सदा व सर्वदा के लिए दयानन्द मठ चम्बा से विदा हो गए। ऋषि कुमार स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज के आंखों के तारे, मठ के प्यारे और भावी कर्णधार थे इन दोनों के चले जाने से दयानन्द मठ चम्बा मानों अनाथ हो गया हो। श्री महावीर व उनकी धर्मपत्नी सरस्वती जी ने मठ की बागडोर सम्भाली है जो अपने आप में बहुत ही चुनौती पूर्ण कार्य है। उनमें मन व मस्तिष्क से मठ के समस्त कार्यों को चलाने का गुरुतर भार संभाला है। इस अगस्त मास का आर्यवन्दना का अंक दयानन्द मठ चम्बा के सहयोग से प्रकाशित हो रहा है। स्वामी जी महाराज व ऋषि कुमार को इस संसार को छोड़े एक साल हो रहा है लेकिन उनके मधुर पावन स्मृतिएं हमारे ह्रदय पटल को झक झोरती रहेंगी मुझे स्वामी जी महाराज की एक स्मृति याद आ रही है। वे मेरे घर में बैठकर मुझे कहने लगे कि मैंने डैहर अनाथालय को नहीं देखा। जिसके बारे में चारों ओर चर्चा होती रहती है। मैं हाथ जोड़कर बोला कि जब आप आदेश दे चल पड़ें। स्वामी जी बोले क्यों न आज ही कार्यों का अवलोकन कर सकुं। अनाथालय के अध्यक्ष श्री सत्य प्रकाश जी हमारे पहुंचने से पहले ही आश्रम में पहुंच चुके थे। अनाथालय की चहुमुखी अवस्था को देखकर वह इससे इतने प्रभावित हुए कि आश्रम के प्रागंण में ही खड़े होकर बोल उठे सत्य प्रकाश मैंने अपना घर छोड़ सन्यासी होकर अपने जीवन को प्रभु की इच्छा में समर्पित कर दिया है। मैं सोचता हूँ कि घर बार छोड़कर भी मैं वह प्राप्त नहीं कर सका जो तुमने गृहस्थ जीवन में रहकर प्राप्त किया। इस आश्रम में पढ़ रहे लगभग १५० बच्चों का देख–रेख का कार्यभार सम्भाला हुआ है। मैं साधु हूँ इन बच्चों को कुछ दे नहीं सकता। अपनी जेब में हाथ डालते हुए स्वामी जी महाराज ने श्री सत्यप्रकाश को ५००० रू. की राशि को सौंपते हुए कहा कि मैं चाहता हूँ कि आप इन बच्चों को डटकर खीर खिलाएं यदि राशि कम पड़ती है तो मैं कृष्ण चन्द आर्य को बाकी राशि मठ से तुरन्त भेज दूंगा। श्री सत्यप्रकाश जी ने भी स्वामी जी की आज्ञा का पालन किया व बच्चों को भर पेट खीर खिलाई स्वामी जी की राशि से भी कुछ राशि बच गई। जिसे आश्रम की व्यवस्था में लगाया गया। स्वामी जी मठ के संचालक और ऋषिवर दयानन्द के सिद्धांतों के प्रचारक थे। उन्हें उठते बैठते सोते–जागते अपने गुरूदेव स्वामी सर्वानन्द महाराज जी की तरह ही ऋषिवर दयानन्द के सिद्धांतों का प्रचार–प्रसार करने का भरपूर आनन्द आता था। वे अखिल भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष बनकर भी लम्बे समय तक विराजमान रहे। उनके कार्यों को भूलाने पर भी नहीं भुलाया जा सकता। वे अपनी लग्न के धनी थे और जीवन पथ पर निरंतर अग्रसर थे! वे मानवता के पुजारी थे। कठिन से कठिन कार्य को सुलझाने में अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग करते थे। वे मधुमेह से ग्रस्त थे लेकिन सेवा कार्य दिन–रात करते रहते थे। वे कहते थे कि मधुमेह से ग्रस्त होने से पहले मेरे जीवन में निरंतर प्रगति पथ पर आगे बढ़ने की इच्छा पैदा होती रही। आज उनका मठ महावीर जी और उनकी धर्मपत्नी सरस्वती जी की देख–रेख में कदमताल कर रहा है। महावीर जी तथा सरस्वती देवी स्वामी जी के स्वपनों को साकार करने के लिए कोई भी कसर नहीं छोड़ी है। एक बार कांगड़ा के उत्सव में दैनिक वीर प्रताप के संचालक श्री वीरेन्द्र जी भी पधारे थे उस समय पंजाब हिंसाग्रस्त था स्वामी जी महाराज ने मुझे कहा भाई अब आर्यसमाज के काम को आप सम्भालों मैं पंजाब में बालिदान देने के लिए चला जाऊंगा। मैं साधु हूँ आप गृहस्थी है आप पर घर गृहस्थी का बहुत भार है। मैंने हाथ जोड़ते हुए स्वामी जी से कहा कि स्वामी जी महाराज बलिदान देना समस्या का समाधान नहीं है आपके जीवन की जितनी कीमत है वह कौन नहीं जानता। आप सक्रिय रूप से कार्य करते जाइए और यह गाड़ी एक न दिन अवश्य पटरी पर आएगी और लोग सुख व शांति का अनुभव करेंगे। मैंने दयानन्द मठ चम्बा को उस समय से देखा था जब स्वामी जी स्लेट के एक छोटे से मकान में विद्यार्थियों के जीवन को सजाने व संवारने का कार्य करते थे एक दिन मैं और संस्कृत कॉलेज के प्राध्यापक श्री रोशन लाल शास्त्री जी मठ में चले गए। स्वामी जी विचारों में डूबे हुए थे अचानक ही उनकी नजर मुझ पर पड़ी और वह कह उठे आज आपका आना कैसे हुआ यह अद्‌भुत बात हो गई। मैंने और रोशन लाल शास्त्री जी ने स्वामी जी के पैर छूते हुए कहा कि स्वामी जी महाराज आपका प्रेम हमें स्वयमेव ही आपकी ओर खिंचता हुआ ले आता है। स्वामी जी के साथ मिल–बैठकर बच्चों के साथ हमने भोजन किया। तदोपरान्त

हमने आज्ञा लेकर प्रस्थान कर दिया। स्वामी महाराज जी की एक–एक बात हमारी स्मृति पटल पर अंकित है उन्हें भुलाये पर भी नहीं भुलाया जा सकता। वे प्रेरणा स्तम्भ के और कठिन से कठिन कार्य को भी कराने के लिए उत्सुक रहते थे। एक बार आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल प्रदेश दो भागों में विभक्त हो गई एक भाग के अध्यक्ष स्वामी जी महाराज थे तथा दूसरी सभा में अध्यक्ष का कार्यभार मुझे संभाला गया। सभा के दो फाड होने के निर्णय से दिल व दिमाग में बड़ा धक्का लगा उन्होंने मण्डी में आर्य समाज में दोनों सभाओं के एकीकरण के लिए कार्यवाही की। उन्होंने सभी के विचारों को बड़े ध्यान से सुना और अन्त में कह उठे कि आज इस सभा का जो दूसरा प्रधान वे अपने मुख से कुछ नहीं कह रहे यह बड़े दुःख की बात है मैंने हाथ जोड़कर स्वामी जी महाराज से कहा कि स्वामी जी महाराज कि इस सदन में बैठे हुए लोगों में एक भी ऐसा नही है जो आपको प्रधान पद पर बैठा हुआ नही देखना चाहता लेकिन दुःख, यह है कि इन लोगों का यह भी कथन है कि कुछ स्वार्थीजन आपके नाम का दुरूपयोग करते है। आपके कंधे पर बंदूक रखकर वे दूसरों का शिकार करते हैं। आपके एकता के प्रयत्न मधुर मनोहर व सराहनीय है। स्वामी जी के मार्गदर्शन से श्री रत्न लाल वैद्य, मेरी ओर स्वामी जी की तीन सदस्यों की कमेटी स्वामी जी महाराज की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई जो दोनों सभाओं के एकीकरण के लिए नए चुनाव करवाने का रास्ता प्रशस्त करेंगे। आर्य समाज बिलासपुर में सभा के चुनाव सम्पन्न हुए स्वामी जी को उपस्थित जनता ने सर्वसम्मति से सभा का अध्यक्ष निर्वाचित किया। उन्होंने दिवंगत सत्यप्रकाश मेहंदीरता के सहयोग से मिलजुल कर नव कमेटी का गठन किया और अपने छोटे–मोटे भेदभावों को मिटाकर आनन्द की वांसुरी बजाई। आज स्वामी सुमेधानन्द जी हमारे मध्य में विराजमान नहीं है लेकिन उनकी शिक्षा लम्बे समय तक आर्यजनों का पथ प्रर्दशन करती रहेगी स्वामी प्रेरणा स्तम्भ थे और कर्तव्य निष्ठता और सच्चाई पसंद थे। वे सभी को हंसते देखना चाहते थे। वे हमेशा ही दूसरों के कष्टों को ताप व संताप को दूर करने का यथाशक्ति भरपूर प्रयत्न करते रहते थे। स्वामी जी चाहते थे कि सभी सुखी निरोगी तथा कष्ट कलेशों से दूर रहे वे सभी को वेद वाणी का अमृत रस पीने व पिलाने के लिए संकल्प प्रद थे। वे यज्ञ पर अटल विश्वास रखते थे दयानन्द मठ चम्बा में हर वर्ष अपने वार्षिक उत्सव में वेदों के उपदेशों की वर्षा करते थे वे जीयो और जीने दो के सिद्धांत का पालन करते थे। मन, वचन व कर्म से वे मानव मात्र के ताप संताप व पाप को दूर करने के लिए प्रयत्नशील रहते थे। स्वामी जी महाराज ७८ साल की आयु में ही परलोक गमन कर गए जिस शिष्य के कंधों में उन्होंने दयानन्द मठ चम्बा का कार्यभार डालना चाहा। वह ऋषि कुमार भी अल्पायु में चल बसा। आज श्री महावीर और सरस्वती दम्पति मिलकर इस कष्टमयी समय में अपने कार्यपथ पर अग्रसर है वे प्रिय ऋषि और सुमेधानन्द जी महाराज के अधूरे काम को पूरा करने के लिए कार्यरत है। प्रभु उन्हें प्रगति पथ पर बढ़ते हुए अपने कार्य को पूरा करने की शक्ति और सामर्थय प्रदान करे और रावी नदी के तट पर बसे हुए इस तीर्थस्थली दयानन्द मठ की गाथा जन–जन तक पहुंचे और स्वामी जी के पावन उपदेशों की स्वरलहरी जन–जन तक भी गूंजती रहे जिसे मानव मात्र के कष्ट–कलेश व दुःख दूर होते रहे स्वामी जी का जीवन परोपकारमय था। वे ऋषिवर दयानन्द के सिद्धांत का पालन करते थे। संसार का उपकार करना ही इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक व समाजिक उन्नति कसा वर्तमान समय में कविवर प्रेमी के शब्दों में इस वारूद के उपर मानव बैठा है और अपने विनाश का ताना–वाना स्वयं ही बुन रहा है आज कविवर प्रेमी के शब्दों में यही कहना ठीक होगा :–

जब से स्वार्थ घुसा प्राणों में, हिंसा नस–नस में है समाई,
आज भाई के खून का प्यासा दिखाई देता है भाई
सभी ओर तलवार तन रही, बचकर जावे कौन कहाँ ?
नित नए शास्त्र बन रहे बचकर जावे कोई कहां ?

आगे कवि स्वयं उत्तर देते हुए कह रहा है :

कवि ने कहा कि सच है दुनिया जलती हिंसा की ज्वाला में आज भेद नहीं है सांप और गले की बरमाला में आज स्वजन ही गला काटते बचकर जाने कौन कहाँ पर किन्तु यह तो कृत्रिम उवाल है इस का दौरा चल न सकेगा। हिम्मत मत हारो यह जगप्रेम पंथ की ओर मुड़ेगा कवि का यह स्वप्न तभी साकार हो पाएगा जब विश्व के मानव एकतासूत्र में बंधकर मानवमात्र की भलाई के लिए रात–दिन कार्य करते हुए प्रगति पथ पर अग्रसर होते रहेंगे।

–कृष्ण चन्द आर्य

सुविचार

♦अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इससे गृहस्थजन विशेष कर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें।

♦सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसकी उसी काम में प्रवृत्त करें।

–महर्षि दयानन्द

कलियुग के याज्ञवल्क्य– स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज

५ अगस्त २०१५ सुबह आठ बजे का समय था जब पूज्य आचार्य महावीर जी द्वारा यह सूचना दी गई कि स्वामी जी महाराज नहीं रहे। जिस तरह अर्जुन के हाथ से गाण्डीव गिर गया था। उसी तरह मेरे हाथ से सामान गिर गया और मैं निश्प्राण सा धरती पर बैठ गया और मुख से निकला– 'हम अनाथ हो गए।' अब स्वामी जी का मुखमण्डल स्मृति पटल पर अंकित हो गया और मैं अपने अतीत में खो गया।

मुझे १६८६ से मई १६६० तक के सारे दृश्य याद आने लगे और मैं सोचने लगा कि वो यज्ञोपवीत संस्कार का दृश्य। श्रावण मास की पूर्णिमा का वह दृश्य। हम सब ब्रह्मचारियों को उपवास रखवाया गया और सुबह यज्ञ पर पूज्य पाद का उपदेश। मातृदेवोभव। पितृदेवोभव। आचार्य देवो भव। माता–पिता और आचार्य साक्षात् देव हैं। इनकी सेवा करनी चाहिए। इनकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। फिर यज्ञोपवीत संस्कार करवाया गया और यज्ञोपवीत आचार्य महावीर सिंह जी के हाथ से दिए गए और मन्त्रा पढ़ा गया :

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत सहजं पुरस्तात्।

यज्ञोपवीत के तीनों धागों का वर्णन विस्तार से स्वामी जी ने किया और ऋषि ऋण से उऋण होने का भाव समझाया। स्वामी जी महाराज का संस्कारों और यज्ञों पर विशेष अधिकार था। हर वर्ष नए ब्रह्मचारियों का संस्कार किया जाता और शिखा और यज्ञोपवीत के महत्व के साथ वखान किया जाता। दिन बीत गये। मैं स्वामी जी महाराज का प्रिय बनता गया। स्वामी जी अपना प्यार इस प्रकार लुटाते कि हमें घर पर रहते अपने माँ–बाप की याद भी कम ही आती।

स्वामी जी महाराज के वस्त्रों को भाई चत्तर सिंह धोते थे। मैंने स्वामी जी को कहा कि मैं चार वर्ष तक आपके वस्त्र धोना चाहता हूं मुझे आज्ञा दो। उन्होंने कहा कि चत्तर सिंह नाराज हो जाएगा। वह भी मेरा प्यारा शिष्य है। अतः बारी–बारी धोया करो। उन्होंने एकदिन मुझ से कहा कि यदि इसी प्रकार तेरी श्रद्धा रही तो तुझे मैं एक दिन भी बेकार नहीं बैठने दूंगा। उनकी भविष्यवाणी सच निकली और पेपर के तुरन्त बाद उन्होंने मुझे डीएवी स्कूल धर्मशाला भेज दिया और साथ में आर्य समाज कोतवाली बाजार धर्मशाला में सेवा करने का आदेश दिया। उनके आशीर्वाद से मुझे वहाँ पर भी खूब प्यार मिला और दो–तीन बार वे धर्मशाला भी आए।

आंखों से अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी और अतीत की घटनाएं रह–रहकर याद आ रही थीं। उनका वह प्यारा वाक्य–'ईजानाः स्वर्गं यान्ति लोकम।' अरे यज्ञ करने वाले सीधे स्वर्ग में जाते हैं। क्या वे स्वर्ग लोक चले गए ? स्वर्ग में क्या देवों ने उनका स्वगत किया होगा ? अर्थात् यज्ञ करने वालों को सूर्य की रश्मियॉ अपनी ओर बुलाती हैं– आओं हमारे पास आओ। इस प्रकार से उनके प्रत्येक व्याख्यान् याद आने लगे। वह सवा करोड़ गायत्री का यज्ञ, निरन्तर यज्ञ की साधना, शारद यज्ञ न जाने यज्ञ के प्रति उनके उद्‌गार स्मृति पटल पर आने लगे।

मन की तीव्रगति, बिजली की तार की भान्ति करंट पकड़ गई और याद आने लगा १६८६ का वह दिन। सायंकाल का समय। यज्ञशाला खचाखच भरी है और स्वामी जी महाराज यज्ञ को बीच में विराम देते हुए कहते हैं कि – अरे यज्ञ प्रेमियों यज्ञ साधकों! आज हमारे बीच गृहस्थी ज्यादा हैं माताएं और बहनों की संख्या अधिक है। मैं आज आपको ऋषि याज्ञवल्स्य की घटना सुनाता हूं। एक समय याज्ञवल्स्य गृहस्थ आश्रम छोड़कर सन्यास की दीक्षा लेने को तैयार हुए। उन्होंने अपनी प्रिया ब्रह्मवादिनी मित्राा की पुत्राी मैत्रोयी से बोला–मैं चतुर्थ आश्रम को धारण करना चाहता हूँ। इस सम्पत्ति का बंटवार कात्यायनी के साथ कर देना चाहता हूँ ताकि बाद में झगड़ा न रहे।

मैत्रोयी ने कहा कि यदि मुझे सारी पृथ्वी का धन ऐश्वर्य मिल जाए तो भी मैं क्या मोक्ष को प्राप्त हो सकती हूँ ? तब याज्ञवल्क्य ने कहा–देवी। ऐसा असम्भव है। धन दौलत से मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती। ऋषि ने कहा कि आत्मा, परमात्मा और प्रकृति तीनों शाश्वत हैं। आत्मा ही ब्रह्म है। सांसारिक भोगों से मोक्ष नहीं मिल सकता। आत्मा से पृथक कुछ मत समझो। इसी आत्मा में ब्रह्मशक्ति है। इसीलिए आत्मा को अवश्य जानना चाहिए। जैसे गीता में भी कहा है :

न जायते म्रियते वा कदाचि–
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो,
न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।
वांसासि जीर्णानि यथा विहाय,
नवानि गृहणाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा–
न्यन्यानि संयाति नवानि देही।।

इस तरह स्वामी जी महाराज का वेदो, उपनिषदों, गीता, महाभारत और रामायण पर पूर्ण अधिकार था। उनके

प्रवचनों में इस प्रकार की सरलता और सुगमता होती थी जिसे साधारण से साधारण मनुष्य भी समझ जाता था। महाभारत के बाद दीर्घकालीन यज्ञ करने का सौभाग्य देवभूमि हिमाचल के चम्बा मण्डल को मिला। जहां पर स्वामी जी महाराज ने लगातार बड़े–बड़े यज्ञों का सम्पादन किया। अन्तिम समय में जब वे बीमार चल रहे थे तो उन्होंने कहा कि अमर सिंह अब शरीर साथ नहीं दे रहा है। मैं चाहता था कि मैं १२ वर्ष तक निरन्तर चलने वाला यज्ञ करूं। हम जालंधर से वापस आ रहे थे। गाड़ी बीच में खड़ी करनी पड़ती थी क्योंकि स्वामी जी को आराम करना होता था। मैंने कहा स्वामी जी अब मुश्किल है। आप इतना लम्बा यज्ञ नहीं कर सकते। आपका स्वास्थ्य अब ठीक नही है। तो उन्होंने कहा–'ते हि नो दिवसः गतः।' अब वे दिन चले गए। परन्तु मेरी अन्तिम इच्छा थी कि मैं १२ वर्ष तक यज्ञ तथा सत्संग चलाता।

पूज्यपाद गुरूदेव के उपदेशों की अमिट छाप आज भी हमें प्रेरित करती रहती है। वे मर कर भी अमर हैं। उनके कार्य, उनकी विचारधारा, उनका प्रेम हमें सदा याद आते रहेंगें। हमारे ह्रदय को भावुक व प्रेरित करते रहेंगें। वह मतवाला जोगी, दिन–रात तपस्या में लीन तथा साधारण वाणी में असाधारण ज्ञान की धारा, उनका प्रेम हमें सदा याद आते रहेंगें। हमारे ह्रदयों को भावुक व प्रेरित करते रहेंगें। वह मतवाला जोगी, दिनरात तपस्या में लीन तथा साधारण वाणी में असाधारण ज्ञान की धारा प्रवाहित करने वाला आज अपने तेजोमय धाम में आनन्दित होगा। उस दिव्य आत्मा को शत–शत, कोटी–कोटी नमन।

जिस धाम में तुम जाओगे, तेजोमय हो जाएगा।
गायत्री मन्त्रों की गुञ्जार से आनन्दमय बन जाएगा।।

–आचार्य अमर सिंह आर्य,
अध्यक्ष, श्री स्वामी सुमेधानन्द शिष्य मण्डल
दयानन्द मठ चम्बा हि.प्र.

आये थे धोने मल पंक लिपटा के चल दिए

परम पिता परमात्मा ने मनुष्य को इस संसार में अपने अर्जित पापों को धोने के लिए भेजा। अपने ह्रदय को शुद्ध व निर्मल करने के लिए भेजा, भार मुक्त होने के लिए भेजा। ताकि जन्म–मरण जनित महान दुःखकारी दुःखों से इसे छुटकारा मिले। और यह अनन्त, असीमित समय तक, उस अलौकिक सुख को भोग सके। जिस सुख को प्राप्त करना ही इस आत्मा का मुख्य ध्येय है। इस आत्मा का लक्ष्य है। जिसे प्राप्त करने के लिए यह आत्मा युगों–युगों से भटक रही है। अनेकों बार जन्म लेने के बाद भी, अनेकों बार मरने के बाद भी यह आत्मा उस परम सुख को प्राप्त न कर सकी। उसे प्राप्त करना तो दूर उसके पास तक न फटक सकी। उससे दूर तर दूर होती चली गयी।

आऐ थे धोने मल जगत में, पंक लिपटा के चल दिए।
गठरी कर्पास लियो दियो डुबकी, भार बढ़ाकर चल दिए।।

संसार में प्राणी आता तो है, जन्म जन्मान्तरों के पापों के मल को धोने, पर यह क्या हर बार विषयों के गंदले पानी में डुबकियां लगाकर, उसी में मस्त हो जाता है। जिसका परिणाम होता है कि पापों के कीचड़ में और भी अधिक सन जाता है। कपास की गठरी का भार जल में डुबोने से जैसे कम होने के बजाय बढ़ जाता है। ठीक उसी प्रकार मनुष्य विषयों के जल में डुबकी लगाकर अपने पापों के भार को और बढ़ा देता है। परिणामस्वरूप, न चाहते हुए भी घोर पापों के भयंकर दावानल में संतप्त होता रहता है। महाभारत में भीष्म पितामह जी युधिष्ठिर को यही बात समझाते हुए कहते हैं :

कामं क्रोधं च लोभं च भयंस्वप्नंचपञ्चमम्।
परित्यज्य निषेवेत यतवाग्योग साधनम्।।

पुत्रा युधिष्ठिर। तुम यदि मोक्ष को प्राप्त करना चाहते हो। उस परम सुख को प्राप्त करना चाहते हो, तो उसका एक ही मार्ग है। और वह है– काम, क्रोध, लोभ, भय, स्वप्न यानि विषयों के गन्दले जल से पापों के कीचड़ को धोने का स्वप्न जो देखना है उसे छोड़ दो। वाणी को वश में रखकर योग साधना में लग जाओ। तो मोक्ष प्राप्त हो जाएगा। विषयों के सेवन में सुख खोजोगे तो वह कभी नही मिलेगा।

ध्यानंयध्ययनं दानं, सत्यं ह्रीरार्जवं क्षमा।
शौचमाहारतः शुद्धिरिन्द्रियाणां च सम्पमः।।

ध्यान, अध्ययन, दान, सत्य, लज्जा, सरलता, क्षमा, पवित्राता, आहार शुद्धि व इन्द्रियों के वशीकरण रूपी निर्मल जल वाली नदी में स्नान करने से पापों का मैल धुल जाता है। साधक का तेज बढ़ जाता है। उसके संकल्पों की सिद्धि होनी शुरु हो जाती है। यानि उसके संकल्प पूरे हो जाते हैं। वह मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं।

एषमार्गो हि मोक्षस्य प्रसन्नोविमलः शुचिः।

जन्म जन्मान्तर से चले आ रहे दुःखों से छूटने का, व परम सुख रूप मोक्ष को प्राप्त करने का यही एक मार्ग है। मोक्ष प्राप्ति का यह सरल उपाय शास्त्रों में बताया गया है। इसे जानते हुए भी मनुष्य की इस ओर प्रवृति नहीं बन पाती। इस

और नहीं आते। पापों की ओर बरबस ही दौड़े जा रहे हैं। दुर्योधन कहता है :

जानाभिधर्मम् नच में प्रवृति।
जानाभ्यधर्मम् न च में निवृति।।

मैं धर्म के विषय में जानता हूँ। अधर्म के विषय में भी जानता हूँ। धर्म क्या है, अधर्म क्या है। इसे भली भान्ति जानता हूँ। यह सब जानते हुए भी, धर्म में प्रवृति तथा अधर्म से मेरी निवृति नहीं हो पाती है। जानते हुए भी धर्म की ओर उन्मुख नहीं हो पाता। अधर्म की ओर बढ़ा चला जा रहा हूँ। अर्जुन भी श्री कृष्ण से यही प्रश्न करते हुए कहते हैं कि हे कृष्ण :

अथकेन प्रयुक्तोऽयं पापम् चरति पूरूषः।
अनिच्छन्मपि वार्ष्णेय वलादिव नियोजितः।।

हे वार्ष्णेय! हे कृष्ण यह बताओ मनुष्य स्वयं तो चाहता नहीं कि मैं पाप कर्म करूं। वह पापों से बचना चाहता है। फिर भी जबरदस्ती लगाए हुए के समान, यह पुरूष, यह मनुष्य किससे प्रेरित होकर पाप का आचरण करता है, पाप कर बैठता है। श्री कृष्ण जी इसका उत्तर देते हुए कहते हैं :

कामएष क्रोध एष रजोगुण समुद्रभवः।
महाशनो महापाप्या विद्द्येनमिह वैरिणम्।।

हे पार्थ! रजोगुण के कारण जो उत्पन्न होते हैं। ऐसा यह बहुत खाने वाला अर्थात भोगों से कभी तृप्त न होने वाला पापी काम ही है, क्रोध ही है, जो मनुष्यों से पाप करवाता है। जघन्य अपराध कराता है। वलात पाप कर्मों को कराने वाले यह ही सबसे बड़े शत्रु है। यह जान लो, सांसारिक विषयों के भोग से कभी शान्ति नहीं मिलती। भोगों को भोगने की इच्छा शान्त नहीं होती। बल्कि वह और भी बढ़ती जाती है। सांसारिक भोग्य संसाधनों की तृष्णा बुझती नहीं और ज्यादा धधकने लगती है। इसी विषय में भर्तृहरि लिखते है :

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता तृष्णा न जीर्णावयमे व जीर्णा
कालो न याता वयमेव याता तपो न तप्ता वयमे व तप्ता।

भोगों को भोगते जीवन बीत गया, पर भोग खत्म नहीं हुए। हम उन्हें नहीं भोग पाए। उनको भोगने की लिप्सा और भी प्रबल होती गयी। हमने भोग क्या भोगने थे भोगों ने हमें भोग लिया। जीवन अन्तीम पड़ाव पर है। आंखें देख नहीं पा रही हैं। कानों ने सुनना बन्द कर दिया है। मुंह में दांत भी नही रहे। गालों की चमड़ी सिकुड़ गयी है। जठराग्नि मन्द हो गयी है, पर भोगों का यौवन और भी निखर कर हमारे सामने मुंह बाए खड़ा है। हम बूढ़े हो गए पर तृष्णा रूपी ललना का रूप और भी अधिक निखर गया है। वह बूढ़ी नही हुई। समय समाप्त नही हुआ। समय वैसा का वैसा है। पर हम बीत गये। हम समाप्त हो गए हैं। तप को नहीं तपा गया हम तपे गए हैं। इसीलिए न चाहते हुए भी मनुष्य वलात् जो पाप कर देता है। हे पार्थ इस विषय में इनको ही अपना परम शत्रु समझो। इन्ही के वशीभूत होकर मनुष्य पाप कर्मों को कर बैठता है। पापों के मल को धोने की अपेक्षा और मल चढ़ा लेता है। रजोगुण वह पंक है जिसमें काम, क्रोध, मोह रूपी विष वृक्षों की उत्पत्ति होती है। काम पैदा हुआ, इच्छा पैदा हुई, लोगों के पास गाड़िया हैं, बंगले हैं। अहा! मेरे पास एक साइकिल ही हो जाती तो कितना अच्छा होता। प्रयास किया साइकिल आ गयी। फिर तृष्णा जगी, साइकिल में इतना लाभ नहीं है। कार होती तो अच्छा । कुछ मेहनत की, कुछ मजदूरी की, कुछ पल्ले मे थे, कुछ माता–पिता से लिए, कुछ भइयों से , कुछ बहनों से लिया, थोड़ा बहुत उधार कर कार भी आ गयी। तृष्णा बढ़ी अब दूसरी एसी कार लेने का भूत सवार हुआ। पल्ले में पैसा है या नहीं, इस विषय में नहीं सोचते। कुछ का उधार पहले का ही है, जो अभी दिया नहीं। रोज की कमाई का खर्चा पहले ली गई गाड़ी पर ही बहुत आ रहा है। अब पैसे कहां से आएगें। गाड़ी तो लेनी ही है वह भी एसी वाली। फिर पकड़ा पाप का रास्ता। किसी की चोरी की, एटीएम तोड़ा, डाका डाला। कोई रोकने वाला आया तो क्रोध रूपी शैतान प्रकट हो जाता है और विरोध करने वालों के ऊपर घातक हथियारों से हमला कर देता है। कोई घायल हो जाता है। कोई मारा जाता है। जिसका परिणाम होता है कि जीवन भर जेल में सड़ता है। जो इस अदालत में बच गया उसे जन्म जन्मान्तरों में उस न्यायाधीश की न्यायव्यवस्था में रहते हुए दुःख भोगने पड़ते है, ताप सहने पड़ते हैं। लोभ व मोह में पड़कर जिन मोह के केन्द्र बिन्दुओं के लिए वह पाप कर्म करता है वे सब जब पापों के फल को भोगने की बारी आती है तो कनियां काट लेते हैं। अलग हो जाते हैं। विदुर जी कहते हैं :

एकमेव जायते जन्तु एकमेव च पुलीयते।
एकमेवसुकृतं भुक्ते एकमेव चदुःस्कृतम्।।

हे राजन! मनुष्य संसार में अकेला आया, अकेला ही जाता है। पाप, पुण्यों से जनित फल को भी अकेला ही भोगता है। अतः मनुष्य को चिन्तनशील, मननशील, स्वाध्यायशील होना चाहिए। ताकि वह इन बातों को ध्यान में रखते हुए, पापों में प्रवृत न हो सके। पापों के पंक में सनने से बच सके। ध्यान, अध्ययन, दान आदि के निर्मल जल में जन्म जन्मान्तरों के मैल को धोकर स्वच्छ, निर्मल हो उस परम धाम को लौटकर अनन्तकाल तक मोक्ष सुख का उपभोग कर सके।

दाता स्वामी सुमेधानन्द जी

पूज्य स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज आर्य समाज के उन महापुरुषों की श्रेणी के महापुरुष थे, जिन्होंने कॉलेज लेबल की शिक्षा प्राप्त की। गुरुकुल में पढ़ने का उन्हें सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। उन गुरुकुलों में जिनमें कि संस्कृत वांग्मय का बोलबाला होता है। वेदों का, शास्त्रों का पठन पाठन होता है। नीति ग्रन्थों का व दर्शन ग्रन्थों का अनुशीलन होता है। संस्कृत में ही लिखित, अपने प्राचीन गौरव, प्राचीन परम्पराओं, अपनी प्राचीन मर्यादाओं, व वैदिक संस्कृति का परिचय कराया जाता है। वैदिक काल के आदर्शो कि झलक दिखाई जाती है। गौरवमय संस्कृति की छाया में नियमों व अनुशासन के सांचे में ढाला जाता है। तप की भट्टी में तपाकर जीवन को कुन्दन बनाने का उपक्रम किया जाता है। त्याग व परोपकार का पाठ पढाया जाता है। जहां हीरे तरासे जाते हैं, जीवन बनाए जाते हैं। भव्य व सुदृढ़ समाज व राष्ट्र की नींव रखी जाती है। भले ही इन महापुरुषों ने इन गुरुकुलों का मुहं न देखा हो पर कोयले के खदानों से निकले बिरले हीरों के समान इन्होनें आर्य जगत में अपनी चमक बिखेरी है। अपनी अमिट छाप छोड़ी है। अपनी रोशनी से आर्य जगत् को रोशन किया है। अपने श्रम, अपने तप, अपने स्वाध्याय के बल पर वह ज्ञान प्राप्त किया। जिसे गुरुकुलीय परिवेश में पढ़ने वाले भी प्राप्त नहीं कर पाते। उन बुलन्दियों को उन्होंने छुआ। जिन्हें हर कोई नहीं छू सकता। वह काम करके दिखाया। जिसके कारण आज भी आर्य समाज की गरिमा बनी हुई है।

स्वामी जी को दीनानगर दयानन्द मठ में छः महीने प्राज्ञ कक्षा जो कि संस्कृत की पहली कक्षा होती है, उसमें बैठने का अवसर अवश्य मिला। इसके अलावा गुरुकुलीय शिक्षा उनकी शून्य थी। यह गुरुकुलीय वातावरण का प्रभाव था। या पूज्य गुरु चरण(स्वामी सर्वानन्द जी महाराज) के संसर्ग का परिणाम था कि उनका जीवन किसी गुरुकुल में तरासे गए व्यक्तित्व से कम नहीं था। सूर्यकान्त मणि, सूर्य की किरणों के पड़ते ही रोशन हो जाती है। चन्द्रकान्त मणि चन्द्रमा की रोशनी से दमकने लगती है। त्यागी, तपस्वी गुरु के संसर्ग मात्र से स्वामी जी का जीवन भी रोशन हो गया। उनके जीवन में चमक आ गयी। स्वामी जी ने गुरु जी के जीवन से सीख ली। उन्होंने स्वाध्याय किया। कठोर तप तपा जिसके परिणाम स्वरुप वैदिक विचार धारा का गहन ज्ञान उन्हें हो गया। वैदिक ग्रन्थों पर, वैदिक मान्यताओं पर एक उद्‌भट्ट विद्वान् के समान बोलने व प्रवचन देने लगे। इतिहास गवाह हैं गुरु के प्रति अगाध श्रद्धा व निष्ठा के परिणाम स्वरुप शिष्य तद्‌विषयक विद्याओं में पारंगत हो गए। महर्षि दयानन्द जी महाराज, योगीराज श्री कृष्ण को आदर्श पुरुष मानते रहे। स्वामी जी महाराज महर्षि के अनुयायी थे। अतः श्री कृष्ण को वे भी अपना आदर्श पुरुष मानते रहे। स्वामी जी ने जहां वेदों का रामायण, महाभारत और उपनिषदों का उनिषद स्वामी जी को बहुत प्रिय थे, का स्वाध्याय किया। उनका गहन अध्ययन किया वहीं श्री कृष्ण जी के, द्वारा उपनिष्ट गीता का स्वाध्याय भी उन्होंने किया। गीता का उनके जीवन में बड़ा प्रभाव रहा। विशेषकर गीता के १७ वें अध्याय में २७ वें श्लोक को तो उन्होनें अपने जीवन में धारण कर लिया था।

यज्ञेतपसि दाने च स्थिति सदिति चोच्यते
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभि धीयते

यज्ञ तप, और दान की वृति को सद्‌वृति कहते हैं। और इन कर्मो के लिए जो कि कर्म किए जाते हैं। उन्हें सत्कर्म कहते हैं। दुःस्वृतियों का त्याग स्वामी जी गृहत्याग के साथ ही कर आए थे। गीता का ज्ञान प्राप्त कर सद्‌वृति को उन्होंने जीवन में धारण कर लिया और उन्हीं सद्‌वृतियों के लिए कर्म करने लगे। गहन साधना करके, कठोर तप तपकर उन्होनें साधना की पूंजी इकट्ठी की। यानि सन्यास के बाद, दो वर्ष तक १८, अठारह–अठारह घंटे की समाधि में बैठकर गायत्री की उन्होंने साधना की। गुरु के आदेश से जब कार्य क्षेत्र में उतरे तो उनके पास साधना की पूंजी थी। कठोर तप तपने की क्षमता थी। स्वार्थ का सर्वथा परित्याग कर,परमार्थ का लवादा ओढ़ चुके थे। श्री कृष्ण के कथनानुसार :

न में पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषुलोकेषु किञ्चन।
नानवाप्तमवात्तव्यं वर्त एव च कर्मणि।।

तीनों लोकों में उनके लिए भी कुछ कर्तव्य शेष न था। जिसके लिए साधारण लोग रात दिन श्रम करने में लगे रहते हैं। उन लौकिक ईष्णाओं की उन्हें ईष्णा न ही थी। जिन ईष्णाओं को ह्रदय में समेटे जनसाधारण अन्धाधुन्ध दौड़ने में लगे हैं, पर मृगतृष्णा सी वह ईष्णाएं उससे दूर होती जा रही हैं। इन ईष्णाओं को सर्वथा छोड़ चुके थे। जिस परम सुख की खोज में योगीजन साधक लोग साधनाऐं करते हैं। उस सुख के यानि मोक्ष के दरवाजे तक उनकी गति हो गई थी। वहां तक वे पहुंच गए थे। गुरु के आदेश से समाज के कल्याण के लिए उस परम सुख का भी उन्होंने त्याग कर दिया था। पुत्रेषणा तो पहले से न थीं लोकेषणा व वित्तेषणा की भी चाह नहीं थी। अतः उन्हें कर्म करने की आवश्यकता नहीं थी। फिर भी उन्होंने कर्म का सहारा लिया। कर्म को अपनाया। कर्मज्यायो ह्यकर्मणः अकर्म से कर्म करना श्रेष्ठ है। मनुष्य समाज कर्महीन न हो जाए। इसके लिए उनके सामने आदर्श स्थापित करने के लिए उन्होंने कर्म को अपनाया :

यद् यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः

वे आदर्श पुरुष जिस बात को प्रमाणित कर देते है। जिस बात पर मोहर लगा देते हैं, कि यह काम करने योग्य हैं। समाज के अन्य लोग वैसा ही करने लगते हैं। स्वामी जी ने श्री कृष्ण जी के द्वारा निर्दिष्ट, निष्काम कर्म को अपनाया। सकाम कर्म मनुष्य को कर्मो के बन्धन में बांधने वाला होता है। और निष्काम कर्म सर्वथा बन्धनों से मुक्त करने वाला होता है। निष्काम कर्म का सर्वश्रेष्ठ माध्यम यज्ञ है।

यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।

जिस प्रकार कीचड़ में रहते हुए भी कमल कीचड़ से दूरी बनाए रखता है, अपनी भीनी–भीनी खुशबू से वातावरण को महकाता रहता है। अपनी भाव भीनी मुस्कान से सबके आकर्षण का केन्द्र बना होता है। ठीक उसी प्रकार पूज्य स्वामी जी ने निष्काम कर्म का सहारा लेकर कर्मो के कीचड़ से अपनी दूरी बनाए रखी। अपने सुयश से अपने संसार को महकाते रहे। अपने लोक कल्याण, जनक कल्याणकारी कार्यो से सभी के आकर्षण का केन्द्र बने रहे। उनका जीवन जब तक रहा वे यज्ञों को निष्ठा पूर्वक करते रहे। पात्रों याचकों को भरपूर दान देते रहे, कठोर तप तपते रहे। संस्था का विस्तार, आर्य समाज के कार्य, दीर्घकालिक यज्ञानुष्ठान लम्बे–लम्बे संत्सग सत्र उनके निष्ठा व कठोर तपों के उदाहरण हैं। अन्तिम समय में शरीर के जीर्ण शीर्ण होने पर भी इन कार्यो को करने में सर्वथा अक्षम होने पर भी उन्होंने इनका त्याग नहीं किया। इनको करते रहें उनकी निष्ठा का क्या कहूँ :

स्वामी जी का शरीर कमजोर दर कमजोर होता जा रहा था। बाहर आना जाना भी बन्द हो गया। हाथों में लिखने की ताकत नहीं रहीं। कभी लेटकर तो कभी बैठकर समय बिता रहे थें। दुर्लभ शारद यज्ञ का समय नजदीक आ रहा था। इस बीच चम्बा में दैविक आपदा आई। भारी बारिश शुरु हो गई थी। और कई दिनों तक पानी बरसता रहा। जगह–जगह भूस्खलन होने लगे। भूस्खलन से मार्ग अवरुद्ध हो गए। मठ में भी इसका प्रभाव पड़ा। और यज्ञशाला के सामने के मैदान की दीवार टूट गई। यज्ञशाला में जाने का रास्ता अवरुद्ध हो गया। यहां तक कि सामने के मकानों को भी खतरा हो गया। यज्ञशाला के पीछे से बहने वाले वर्षाती नाले ने भी कटान शुरुकर दी। यज्ञशाला के अस्तित्व को भी खतरा पैदा हो गया। अब क्या करें। मैंने लेखनी उठाई और मठ के हितेषियों को मठ की स्थिति से अवगत कराया। संवेदनशील हितेशियों ने सहयोग राशियां भेजनी शुरु कर दी। मैंने मरम्मत का काम शुरु दिया। बीच–बीच में बारिश होती रही। दिन में बारिश रुक जाती, तो हम काम शुरु करते। रात को फिर बारिश शुरु हो जाती। दिन में किया काम नष्ट हो जाता। यह हमारे धैर्य की, पूज्य स्वामी जी के निष्ठा व आस्था की परीक्षा की घड़ियां थी। हम कार्य करते रहें और स्वामी जी से निवेदन करते रहे। स्वामी जी इस बार शारद यज्ञ को स्थगित कर दो। अगले साल पुनः इस यज्ञ को शुरु करेगें। स्वामी जी नहीं माने। हमने कहा चलो कर लेगें पर छोटे स्तर पर करेंगे। इस पर भी नहीं माने। हमने कहा स्वामी जी बड़ी यज्ञशाला का रास्ता बन्द है। उसके आगे खण्डहर बना है। मलबा पड़ा हैं, पत्थरों का ढेर हैं। वहां यज्ञ संभव नहीं है। नीचे छोटी यज्ञशाला में यज्ञ कर लेगें। यज्ञशाला छोटी है लोग बारी–बारी करके छोटे–छोटे ग्रुप में आहुतियां देने अन्दर आते जाऐगें और बाहर बैठते जाऐगे। स्वामी जी ने कुछ समय के लिए हमारी इस सलाह को मान तो लिया, पर कुछ दिनों के बाद बड़ी यज्ञशाला में ही यज्ञ करने का राग अलापने लगें। शरीर चलने–फिरने से असक्त था। पर मन में दृढ़ इच्छा शक्ति थी। स्वामी जी देने वाले लोग वही है। उन्होने इस आपदा के बचाव के लिए जो देना था दे दिया। अब यज्ञ के लिए कहां से आएगा। हमारी यह बात भी उन्होने नहीं सुनी। अपने हठ पर डटे रहें। खैर रात दिन एक कर हमने निर्माण कार्य किया। कल यज्ञ आरम्भ करना था। आज रात तक निर्माण कार्य को पूराकर साफ सफाई की और दूसरे दिन प्रातः से यज्ञ आरम्भ हो गया। स्वामी जी पूरे समय यानि २८ घंण्टो तक यज्ञशाला में बैठे रहे। मौसम भी साफ हो गया था। स्वामी जी परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। यज्ञ सुखपूर्वक सम्पन्न हो गया।

स्वामी जी अब बिस्तर पर ही लेटे रहने लगे। कभी सहारा देकर कुर्सी में उन्हें हम बिठा देते। कुछ देर के बाद फिर लेट जाते। उनके इलाज पर भी खर्चा बहुत हो रहा था। बार–बार जालन्धर ले जाना पड़ रहा था। मठ की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। स्वामी जी के इलाज के साथ–साथ संस्था के अपने जो खर्चा थे वे वैसे के वैसे थे। हम लोग कठिनाई से समय निकाल रहे थे। स्वामी जी को हम इस विषय में कुछ नहीं बताते थे। क्योकि वे और चिन्तित न हो जाएं। यह चिन्ता हमें होती थी। लेटे लेटे भी हमें हौंसला देते कि तुम चिन्ता न करो। मैं अभी नहीं जाने वाला। तुम लोगों की पूरी सुरक्षा करके जाऊंगा। हम उन्हें कहते स्वामी जी आप हमारी व संस्था की चिन्ता करनी छोड़ दो अपने स्वास्थ्य की ओर ध्यान दो। ईश्वर का ध्यान करो बस सब ठीक हो जाएगा। पन्द्रह हजार रुपय दान के जो कि स्वामी जी के खाते में बाहर से भेजे गये थे, वे जमा थे। हमने वे भी निकलवाए नहीं यह सोचकर कि स्वामी जी के इलाज हेतु बाहर जाना पड़ता है। यह पैसा उस समय काम आएगा। इस बीच एक युवक की शादी थी वह स्वामी जी से मिलने आया। स्वामी जी ने उससे ही अपनी अलमारी से चैक बुक मंगाई और पन्द्रह हजार का चैक काटकर उसे दे दिया। बाद में

मुझे जब सूचना दी तो मेरी क्या स्थिति हुई होगी यह पाठक जन भलीं भाति अनुमान लगा सकते हैं। गरीबी में आटा गीला कहावत यहां फलीभूत होती हैं। यह दो घटनाएं उनकी यज्ञ, दान व तप में निष्ठा की मैने दी। ऐसी घटनाएं एक नहीं दो नहीं अनेको हैं। उनका प्रतिदिन इन्हीं कार्यों में बीतता था। दुनेरा पंजाब से एक विधवा मां अपनी बेटी की शादी में सहयोग मांगने चम्बा मठ में आई। स्वामी जी से उसने अपनी गुहार लगाई, स्वामी जी ने मुझे आदेश दिया। जो सहयोग राशी देनी थी हमने दी। भाईजनक के द्वारा भेजे कम्बलों में से दो कम्बल भी दिए। मेरी पत्नी के कुछ अनसिले सूट उनके पास पड़े थे। वह भी दिए और वह मां प्रसन्न होकर उन सब वस्तुओं को लेकर चली गयी। एक महीने के बाद वह पुनः आती हैं। अब वह अकेली नहीं थी। उसके साथ एक नयी दुल्हन भी थी। वह उसकी बेटी थी। स्वामी जी को उन्होने माथा टेका, बेटी ने मेरे व मेरी पत्नी के भी पांव छुए। मां ने दूर से ही प्रणाम किया उसने परिचय कराते हुए कहा स्वामी जी यहीं मेरी वह बेटी है, जिसकी शादी आपकी कृपा से व आपके आशीर्वाद से सुखपूर्वक सम्पन्न को गयी। हम सबने बड़ी खुशी जताई। साथ ही उन्हें बधाई भी दी। चाय पानी पीने के बाद लड़की स्वामी जी को कहती हैं पिताजी मेरे पास सोने की अंगूठी नहीं है। ससुराल वालों ने भी कोई गहना नहीं दिया। मेरी बड़ी इच्छा है कि मेरे पास एक सोने की अंगूठी हो। आप मुझे अंगूठी बनाकर दे दो। स्वामी जी ने पूछा अंगूठी कितने की बनेगी। उन्होंने कहा तीन हजार तक बन जाएगी। उस समय सोना सस्ता था। स्वामी जी ने हमें तुरन्त आदेश दिया कि इसे साढ़े तीन हजार रुपये दे दो। हमने रुपये उन्हें थमाए। और वे चले गए। आर्थिक सहायताओं के साथ–साथ अपनी साधना की पूंजी में से भी दिल खोलकर दान देते। किसी ने कहा स्वामी जी हमारे लिए यज्ञानुष्ठान कर दें। स्वामी जी बड़ी ही निष्ठा व तन्मयता से उनके निमित्त यहां मठ में यज्ञानुष्ठान करते। कोई कहता स्वामी जी हमारे लिए अमुक कार्य की सिद्धि के लिए प्रार्थनाऐं कर देना। स्वामी जी प्रातः सायं यहां तक दिन में भी एकान्त में बैठकर भावविभोर होकर प्रार्थनाएं करते और वे प्रार्थनाऐं फलीभूत होती। ईश्वर व्यर्थ में किसी को कुछ नहीं देता। याचक के कर्म उसके याचना के अनुरुप हो न हो पर उसके लिए की गई प्रार्थनाऐं यदि फलीभूत हुयी तो प्रार्थना करने वाले की साधना की पूंजी से उतनी पूंजी स्थानान्तरित हो जाती हैं। जिसका परिणाम है प्रार्थनाओं का फलीभूत होना। यह विषय लम्बा है। मेरे कहने का अभिप्राय है कि स्वामी जी ने अपनी वह पूंजी भी इस प्रकार दान कर दी। जब गए सब खाली करके गए। वह बात अलग है कि उस लोक में दिव्य लोकों में उनके लिए स्थान भव्य स्थान सुरक्षित थे। अनन्त कालों तक भोगने योग्य सुख सुविधाएं सुरक्षित थी। क्योकि कर्म का फल अवश्य मिलता है, उन्हें मिला। हमारे साथ–साथ प्रिय ऋषि यहां पर उनकी सेवा, उनकी सुरक्षा में हर समय लगे होते थे। और जैसे ही आभास हुआ की अब स्वामी जी का प्रयाण निकट है।। ईश्वर ने इनकी व्यवस्था के लिए उसे ठीक दो मास पूर्व सहसा ही बुला लिया। दोनों के जाने के बाद भी मठ के कार्य निर्विघ्न रुप से चल रहें हैं। यह सब उस महान आत्मा के तप व साधना के फलस्वरुप ही चल रहे हैं। और आगे भी चलेंगें। ईश्वर हमें भी शक्ति दे, सामर्थ्य दे, कि हम भी उन दिव्य आत्माओं के पद चिन्हों पर चलते हुए यज्ञ,दान,व तप की श्रृखंला को आगे बढ़ा सकें।

—महावीर

ब्रह्मलीन स्वामी सुमेधानन्द जी

कारवां भीड़ का गुजरता है, गुजरना है उसे।
दरिया को तो बहते चले जाना है।।
हर पड़ाव पर मुकाम बदल जाते हैं।
रास्ते बहाव की दिशा से फिर जाते हैं।
चलती डगर की कोई हद तो होगी जरूर।
सफल–असफल तो पाने व खोने का अन्तर है।।
लाखों में सितमगर ये कोई भेद परखता है।
वरना आना व जाना तो दस्तूर के सिवा कुछ भी नहीं।।
वो तारीख धन्य कर देती है जमाने के लोगों को।
जब ऐसी मूरते उतरती हैं धरती पर।।
अपने जख्मों की टीस दिल में छुपाए हुए।
खुद बेताब हों भटकों को राह दिखलाने।।
ईश्वर से हमने दुआ मांगी थी हर दिन।
धरती समाज मे आपकी सलामती के लिए।।
समाज के बेसहारों का हाथ थामे बढ़ रहे थे आप।
अपने सुकृत्यों से उनका जीवन संवारने के लिए।।
लेकिन जग की नश्वरता की रीत जग जाहिर है।
जो आया है, एक दिन छोड़कर जायेगा जरूर।।
वे तो नीड़ पंछी का है, रातभर रूकने के लिए।
सुबह होते ही फुर्र से उड़ जाना है।।
पॉच तत्वों से निर्मित काया विलीन हुई उन्हीं तत्वों में।
युवा 'ऋषि कुमार' स्वामी जी से पूर्व ही ।।
प्रस्थान कर चुका था, उस अलौकिक राह पर बढ़ने को।
दोनों ही आत्मा परमात्मा में लीन हो जायें।।
दिल की गहराईयों से विनती हमारी है।
हे जगदीश! इन्हें मुक्त कर चिरशान्ति प्रदान कर देना।।

—डा० नन्द किशोर खंडूरी, बालासौड़ कोटद्वार

मेरी स्मृति में स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज

बात उन दिनों की है जब मैं १९८९ में शास्त्री करने हेतु दयानन्द मठ चम्बा में दाखिला लेने गया। स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज का दिव्य तेजोमय चेहरा, मधुर वाणी व प्रभावशाली व्यक्तित्व को देखकर कोई भी अनायास ही उनकी ओर खिंचा चला जाता। स्वामी जी महाराज प्रातः तीन बजे उठकर स्नानादि से निवृत्त हो कर, सन्ध्यावन्दनोपरान्त अपने कार्य में लग जाते थे। स्वामी जी महाराज प्रत्येक पत्र का उत्तर अपने हाथ से लिखे पत्र द्वारा ही दिया करते थे। उनकी भाषा व लिखाई देखकर हर कोई हैरान रह जाता। सुबह ४ बजे आश्रम में ब्रह्मचारियों को जगाने के लिए वे स्वयं ही घण्टी बजाया करते थे तथा प्रातः कालीन मन्त्र पाठ में स्वयं उपस्थित रहते थे। मठ में प्रातः व सायंकालीन यज्ञ में वे स्वयं उपस्थित रहते तथा ब्रह्मचारियों को अपने अमृतमय उपदेश से निहाल करते थे। स्वामी जी एक ओजस्वी वक्ता व एक व्यवहार कुशल इन्सान थे। वे हमेशा चरित्र निर्माण पर बल देते थे। वे एक गुरू, पिता व दोस्त की तरह समयोचित व्यवहार करते थे। वे खुद सन्यासी थे किन्तु कहा करते थे कि गृहस्थ आश्रम ही सर्वश्रेष्ठ आश्रम है अगर उसे एक सद् गृहस्थ की तरह जिया जाए। यह बात तो सर्वविदित ही है कि स्वामी जी एक महान् याज्ञिक थे। उन्होंने महाभारत के बाद का सबसे बड़ा दीर्घकालीन एक वर्ष तक चलने वाले यज्ञ का आयोजन किया। मुझे भी उसे यज्ञ का साक्षी होने का सौभाग्य मिला। स्वामी जी बिना थके यज्ञ कार्य में लगे रहते थे। इस यज्ञ के प्रबन्धक व मठ के प्रबन्धन कार्य में उनकी दाहिनी भुजा के रूप में आचार्य महावीर सदैव उनका साथ देते रहते। स्वामी जी की कठिन तपस्या से ही जंगल में मंगल बना। दयानन्द मठ आर्यों का तीर्थस्थल बना। मठ में पधारे प्रसिद्ध सहारनपुर के भजनोपदेशक श्री बृजलाल कर्मठ की इन पंक्तियों का यहां जिक्र करना आवश्यक लगने लगता है :

हिम की चट्टानें, ये रावी का तट है,
धरती पे जन्नत दयानन्द मठ है।
फलदार वृक्ष और पुष्पों की क्यारी,
अध्ययन में रत हैं सभी ब्रह्मचारी।
हवन की गन्धी बड़ी लाभप्रद है,
धरती पे जन्नत दयानन्द मठ है।
धन–धन सुमेधानन्द जी तुम्हें धन,
इस धरती को समझा माथे का चन्दन।
सुबह और सांय जहाँ वेदो की रट है,
धरती पे जन्नत दयानन्द मठ है।

वास्तव में दयानन्द मठ स्वामी जी महाराज की तपोभूमि व कर्मस्थली है, जहां पर पधारे एक संन्यासी ने अपनी निष्काम तपस्या व कर्म की अनूठी मिशाल पेश की है। स्वामी जी महाराज एक कर्मयोगी थे उनका ध्येय वाक्य था "योगः कर्मसु कौशलम्"। वे हमेशा कर्मशील रहने का उपदेश दिया करते थे वे ब्रह्मचारियों को कहा करते थे कि 'God helps those who help themselves'। उनका जीवन एक आदर्श आर्य संन्यासी का जीवन था। एक शिष्य के रूप में मुझे उनके काफी नजदीक पांच वर्ष रहने का मौका मिला। आज जिन्दगी के इस पड़ाव पर उनके व्यक्तित्व का स्मरण होता है तो सिर कृतज्ञता से नतमस्तक हो जाता है। मैं आज समाज में फैली अनेक कुरीतियों को देखता हूँ तो महसूस होता है कि अगर मुझे स्वामी जी महाराज का सानिध्य प्राप्त न हुआ होता तो क्या होता।

आज इस गृहस्थ जीवन में पग–पग पर स्वामी जी के उपदेशों का स्मरण अनायास ही हो जाता है। जिन्दगी में जब कभी कठिन समय आता है तो स्वामी जी का वह वाक्य हमेशा मेरा मार्ग दर्शन करता है। स्वामी जी कहते थे कि बेटा 'जब दुःख व निराशा की घनघोर काली घटाएं घिर जाएं तथा दुःख अपनी चरम सीमा पर हो तो समझ लेना कि सुख व उम्मीद की किरण निकलने वाली है।' यह वाक्य मुझे जिन्दगी में नई प्रेरणा देता रहता है। मैं स्वामी जी के सानिध्य में पांच वर्षों तक रहा। पांच वर्षों के अनुभवों को कागजों के कुछ पन्नों पा उतार पाना सम्भव नहीं लगता। स्वामी जी महर्षि दयानन्द के विचारों के प्रसार व प्रचार हेतु आजीवन प्रयासरत रहे। स्वामी जी महाराज का जीवन एक आदर्श आर्य सन्यासी का जीवन था। स्वामी जी वो महान् विभूति थे जो आजीवन आर्य जगत् में एक चमकीले तारे की तरह छाए रहे। आज उनके न होने का आभास समस्त आर्य जगत् महसूस कर रहा है।

स्वामी सुमेधानन्द जी का जीवन आर्य समाज की विचारधारा के उत्थान के लिए समर्पित था। स्वामी जी महाराज नैतिकता पर अत्यधिक बल देते थे। वे उपनिषदों का गहन अध्ययन करते थे। 'यज्ञो वै श्रेष्ठतमम् कर्म:' इस कथनानुसार वे आजीवन यज्ञ के प्रति समर्पित रहे। स्वामी जी महाराज नैतिकता के बिना शिक्षा को अधूरा मानते थे। वे उपनिषदों (छान्दोग्य) के कथानक सत्यकाम और जावालि का बार–बार उल्लेख करते थे। समस्त आर्यजनो! आओ आज हम सब प्रण लें कि हम सब स्वामी जी महाराज के बताए हुए रास्ते पर चलकर अपना व समाज का उत्थान करने का प्रयास करें। यही हमारी स्वामी जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजली होगी। इन्हीं चन्द शब्दों के साथ मैं अपनी लेखनी को विराम देना चाहता हूँ।

एक बार पुनः उस महान् विभूति को श्रद्धांजलि के रूप में शत–शत नमन।

रोशन लाल आचार्य, कला स्नातक
रा.व.मा. पाठशाला, वतोट डा. खुन्देल, जिला चम्बा हि. प्र.

विराट पुरुष–स्वामी सुमेधानन्द जी सरस्वती

संत सिरोमणि पूज्यपाद स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज का प्रखर और आकर्षक व्यक्तित्व को कौन नहीं जानता। उनके जीवन का परिचय उनके महान कार्य ही करवा देते हैं। याज्ञिक के रुप में प्रसिद्ध स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज का सानिध्य मुझे सन् १९८६ में मिला। उस समय कोमल अवस्था और अपरिपक्व विचार मन की उथल–पुथल और जीवन में आगे बढ़ने की ललक तथा अनेक विचारों के पर्याय के रुप में मुझे एक मात्रा सहारा स्वामी जी महाराज लगे। उनका वरदहस्त इस प्रकार फलीभूत हुआ कि आज मैं अपने जीवन का आनन्द ले रहा हूँ।

मेरे जीवन की सादगी, सात्विकता और मानो मेरे प्राण सब स्वामी जी महाराज की देन हैं। मुझे मठ में काफी समय तक रहने का मौका मिला। सन् १९८६ से १९९० तक अध्ययन का कार्य किया। तत्पश्चात् जुलाई १९९० से १९९४ तक अध्यापक का कार्य किया। मेरे जीवन के आठ वर्ष मानो स्वर्णिम् युग हो। प्रातः कालीन चार बजे से रात साढ़े नौ बजे तक पूरा का पूरा समय मठ में रहा और अनेक प्रकार के संत सिरोमणियों के प्रवचन सुनने का मौका मिला। परन्तु जिस प्रकार की मिठास स्वामी जी के प्रवचनों में लगती थी वैसे मिठास आज तक नहीं मिली।

वाह– क्या थे हमारे पूज्य गुरुदेव। जब मैं बच्चा था यानि १५ वर्ष का था तब लगता था स्वामी जी भी हमारी तरह बच्चे ही हैं। वो लाड, प्यार और आशीर्वाद जब कभी बाहर से आते तो आवाज आती। आचार्य जी इधर आओ जब जाकर देखता तो मिठाई, आम के समय आम, संतरे के समय संतरे ओर मुंगफली के समय मुंगफली लाते। और कहते सभी ब्रह्मचारियों में बांट दो। हमें ऐसे लगता था कि हमारे पिताजी बाहर से आए हैं। जैसे कि प्रायः घर पर देखने को मिलता है। उन्हें गृहस्थ जीवन का मानो पूरा ज्ञान हो। कभी कभार हमभी किसी बात पर अड़ जाते तो वे विनम्रता दिखाते जैसे हमारे से छोटे हो। क्षणे रूष्टः क्षणे तुष्टः जैसा उनका व्यतित्व था।

व्यवहार कुशलता उनकी इतनी थी कि वह किसी भी आदमी के व्यवहार को इतनी जल्दी समझ जाते, जैसे मानो वे उन्हें कई वर्षों से जानते हों। दयानन्द मठ चम्बा उनकी देन है। परन्तु संस्कृत विद्यालय खोलकर जो गरीबो का भला किया है उसका वर्णन करना असम्भव है। गरीब बच्चों को चप्पल, कपड़े, खान–पान सब निःशुल्क था। वह कभी किसी से घृणा नहीं करते थे। उन्होनें सदा "वसुदेव कुटुम्बकम्" की भावना से भावित होकर काम किया।

गायत्री सिद्ध पुरुष स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज जब भी संध्या में बैठते तो धीरे–धीरे उनका चेहरा लाल होता जाता। मैंने कई बार ये आभास किया था। तब मुझे लगा कि जब माँ अपने बच्चों को दुलार करती है और उसका बच्चा खिलखिलाता हुआ हंसता है और उसके गालों में लाली आ जाती है। उसी तरह की अवस्था उनमें मुझे दिखाई देती है। आज ऐसा लगता है कि वे शायद साक्षात माँ गायत्री से बात–चीत करते होंगे।

१९८९ मे जब उन्होंने सवा करोड़ का यज्ञ किया था उस समय में वहीं पर था उनकी तपस्या, उनका ठहराव, लगातार यज्ञ में बैठना और कई दिनों तक उपवास इस प्रकार का आलौकिक जीवन था। उनका हर क्षण राष्ट्रहित में होता था। आर्य जाति का उत्थान कैसे हो इस प्रकार की योजना वह सदा बनाते रहते थे। उनके दाहिना हाथ आचार्य महावीर जी और सरस्वती जी उनके साथ सदा चट्टान की तरह खड़े रहे। मठ की उन्नति में वे भी समान भागीदार हैं। ऋषि कुमार की बात यहां कहने लगूं तो स्वामी जी की बात अधूरी रह जायेगी। परन्तु ऋषि कुमार जी की सहभागिता, मठ के उत्थान में सर्वोपरि है। अन्त तक उन्होंने भी मठ का साथ दिया।

त्रिमूर्ति के रुप में स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज, आचार्य महावीर जी वह सरस्वती हैं तथा गणेश के रुप में ऋषि कुमार थे। स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज को उपनिषदों का सूक्ष्म ज्ञान था। वह अपने प्रवचनों में मुण्डकोपनिषद तथा ईश उपनिषद का व्याख्यान देते थे। रामायण और महाभारत की घटनाओं का उल्लेख करते हुए सदा उस की उपयोगिता बतलाते थे।

गीता के ग्यारहवें अध्याय का वे कई बार उल्लेख करते थे जिसमें श्री कृष्ण जी का विराट रुप दिखाई देता है। गीता का सब से प्रिय उनका श्लोक था :–

यदा–यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भपति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहूम्।।

वे कहते थे कि आर्य जाति के उत्थान के लिए मैं बार–बार जन्म लेता रहूंगा। मैं भी श्री कृष्ण की तरह आर्य धर्म का प्रचार–प्रसार करता रहूंगा। अन्तिम समय तक वे इस प्रकार की भावनाओं से प्रभावित रहे। उनकी शरीर आत्मा और मन सदैव राष्ट्रहित में लगा रहता था। अन्त में :

मानव कहूँ या महामानव कहूँ,
निर्णय नहीं कर पाता दिन रात
जब गीता और महाभारत पढ़ा,
लगता तुम भी थे पुरुष विराट।।

"इत्योम शम्"

–दीनानाथ शास्त्री, स्नातक दयानन्द मठ, चम्बा (हि. प्र.)

एक सच्चे सन्त की स्मृति

•डा. रघुवीर वेदालंकार

संस्कृत का एक श्लोक है :

शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो न हि सर्वत्र चन्दनं न वने वने।।

भारत में संन्यस्त व्यक्ति तो पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं। उनमें से कितने संन्यास धर्म का पालन करते हैं। यह विषय यहां विवेच्य नहीं है। साऐषणा धूता कम्पिता नाशिता येन सः साधुः। संक्षिप्त सी परिभाषा है कि एषणात्यय यानि साधु है तथा इनसे ग्रस्त व्यक्ति सांसारिक है। रंग तथा वस्त्रों का यहां कोई विशेष महत्व नही है। यही कारण है कि व्यक्ति को संन्यास लेते समय तीनों ऐषणाओं के त्याग की घोषणा करनी पड़ती। ऐषणा अर्थात सभी प्रकार का सांसारिक व्यापार छोड़ दिया तो अब संन्यासी क्या करे ? महर्षि दयानन्द कहते हैं "संन्यासी को सत्यविद्या से पदार्थों के विज्ञान की उन्नति का जितना अवकाश मिलता है, उतना अन्य आदमी को नही मिल सकता। अतः संन्यासी लोकोपकार करे तथा परमेश्वर का चिन्तन करे।

पूज्य स्वामी सुमेधानन्द जी सच्चे आर्य संन्यासी थे। वैदिक धर्म का प्रचार–प्रसार करना उनका लक्ष्य था क्योंकि मनु जी का भी आदेश है– संन्यसेत् सर्वकमाणि वेदमेकं न संन्यसेत्। संन्यासी सभी सांसारिक कार्यों को तो छोड़ दे, किन्तु वेद को न छोड़े। उसका अध्ययन, प्रचार, प्रसार करता ही रहे। स्वामी सुमेधानन्द जी भी इस कार्य में आजीवन लगे रहे। इसके साथ ही दयानन्द मठ में दयानन्द मठ संस्कृत महाविद्यालय भी चलाया गया तथा चल रहा है, क्योंकि वेदाध्ययन के लिए संस्कृत अत्यावश्यक है। प्राचीन वैदिक संस्कृति की रक्षार्थ भी संस्कृत आवश्यक है, क्योंकि संस्कृतिः संस्कृतान्विता।

आज जिस प्रदूषित पर्यावरण से समस्त संसार चित्रित है, उसके निवारणार्थ दयानन्द मठ में दयानन्द मठ में स्वामी जी प्रतिवर्ष बृहद यज्ञ जोकि अहर्निश चलता था, भी किया करते थे। आशा है कि यह परम्परा आगे भी चलती रहेगी। स्वामी जी का जीवन यज्ञमय था, त्यागमय था, यज्ञ की भान्ति ही सुगन्धित था, जिसका पूज्य स्मरण हम लोग अभी भी कर रहे हैं। इन सबके साथ आधुनिक शिक्षा की प्रासङ्गिकता को देखते हुए महर्षि दयानन्द आदर्श विद्यालय नर्सरी से बारहवी तक भी मठ की ओर से चलाया जा रहा है। स्वास्थ्य संवर्धन हेतु महर्षि दयानन्द प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र तथा धर्मार्थ नेत्र चिकित्सालय भी चलाए जा रहे हैं। इस प्रकार सांसारिक ऐषणाओं को छोड़कर भी यह पूज्य परिव्राट आजीवन लोकोपयोगी कार्यों में लगा रहा।

यह लोकधर्म है कि अच्छे कार्य, विशेषकर लोकोपयोगी कार्य करते हुए व्यक्ति में मन में अहंकार भी पनप जाता है जिस कारण वह अपने आप को अन्यों से श्रेष्ठ समझने लगता है। स्वामी सुमेधानन्द जी इस से पूर्णतः थे। मठ के द्वारा चलाए जाने वाले इतने कार्यों के साथ–साथ स्वामी जी ने आर्य समाज के संगठन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कैप्टन देवरत्न जी के सार्वदेशिक का प्रधान बन जाने पर दौर्भाग्य से आर्यों में उपजी फूट तथा वैमनस्य को दूर करने के लिए स्वामी जी की अध्यक्षता में ही एकता समिति बनी। संयोजक के रूप में मुझे भी उसमें रहने का अवसर मिला तो मैंने देखा कि आर्यों का स्वार्थ तथा पदलिप्सा इतनी बढ़ गयी है कि किसी श्रेष्ठ संन्यासी का आदेश शिरोधार्य करना भी उनके लिए सहय नहीं है। सबके अपने अपने तथा स्वार्थ थे। बात कहने में और होती थी तथा मन में और। इसीलिए समिति को असफल होना ही था। एक घड़े द्वारा सर्वथा अवान्छित तरीके से सार्वदेशिक पर कब्जा करने के उपरान्त भी स्वामी जी को समन्वय समिति का अध्यक्ष बनाया गया। विशुद्ध हृदय स्वामी जी उनकी बातों में आ गये, किन्तु परिणाम क्या होना था, जबकि मेरे मन कुछ और है, विधना के मन कुछ और। इन पहलुओं ने ऐसे सन्त को भी चक्कर में डाले रखा, यह आश्चर्य था।

अस्तु आर्य समाज तो वहीं है जहां स्वामी जी के सामने था, हम भी वहीं हैं। बस, एक हंस विधना इस सरोवर को छोड़कर उड़ गया तथा ऐसा उड़ा कि अब वापिस नहीं आएगा। कवि कहता है

हानिस्तु तेषां हि सरोवराणां येणां मरालैः सह विप्रयोगः। जहां से मराल हंस उड़ जाते हैं, उन सरोवरों की हानि ही होती है। आर्य समाज से भी ऐसे हंस बिछुड़ रहे हैं। नये नहीं आ रहे हैं। स्वामी जी भी चले गये किन्तु, 'कीर्तिर्यस्य स जीवति'। वे अपने उदात्त स्वभाव से, अपने उज्ज्वल यश से, अपने सन्त स्वरूप से आज भी हमारे मध्य विराजमान हैं। बिना लाग लपेट, छल प्रपञ्च से दूर, दयानन्द भक्त इनको सच्चे संन्यासी के रूप में स्वामी सुमेधानन्द जी आज भी हमारे मध्य में विराजमान हैं। नास्ति तेषां यशः काये जन्ममरणजं भयम्। उनकी प्रथम पुण्यतिथि पर स्वामी जी को श्रद्धापूर्वक नमन। स्वामी जी के सम्बन्ध में निम्न श्लोक उपयुक्त ही है–

वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधायुक्तो वाचः।
करणं परोपकरणं करणाम् ऐषां केषां नः ते वन्द्याः।।

एक सच्चे सन्त की स्मृति

♦डा. रघुवीर वेदालंकार

संस्कृत का एक श्लोक है :

शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो न हि सर्वत्र चन्दनं न वने वने।।

भारत में संन्यस्त व्यक्ति तो पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं। उनमें से कितने संन्यास धर्म का पालन करते हैं। यह विषय यहां विवेच्य नहीं है। साऐषणा धूता कम्पिता नाशिता येन सः साधुः। संक्षिप्त सी परिभाषा है कि एषणात्यय यानि साधु है तथा इनसे ग्रस्त व्यक्ति सांसारिक है। रंग तथा वस्त्राों का यहां कोई विशेष महत्व नही है। यही कारण है कि व्यक्ति को संन्यास लेते समय तीनों ऐषणाओं के त्याग की घोषणा करनी पड़ती। ऐषणा अर्थात सभी प्रकार का सांसारिक व्यापार छोड़ दिया तो अब संन्यासी क्या करे ? महर्षि दयानन्द कहते हैं ''संन्यासी को सत्यविद्या से पदार्थों के विज्ञान की उन्नति का जितना अवकाश मिलता है, उतना अन्य आदमी को नही मिल सकता। अतः संन्यासी लोकोपकार करे तथा परमेश्वर का चिन्तन करे।

पूज्य स्वामी सुमेधानन्द जी सच्चे आर्य संन्यासी थे। वैदिक धर्म का प्रचार–प्रसार करना उनका लक्ष्य था क्योंकि मनु जी का भी आदेश है– संन्यसेत् सर्वकमाणि वेदमेकं न संन्यसेत्। संन्यासी सभी सांसारिक कार्यों को तो छोड़ दे, किन्तु वेद को न छोड़े। उसका अध्ययन, प्रचार, प्रसार करता ही रहे। स्वामी सुमेधानन्द जी भी इस कार्य में आजीवन लगे रहे। इसके साथ ही दयानन्द मठ में दयानन्द मठ संस्कृत महाविद्यालय भी चलाया गया तथा चल रहा है, क्योंकि वेदाध्ययन के लिए संस्कृत अत्यावश्यक है। प्राचीन वैदिक संस्कृति की रक्षार्थ भी संस्कृत आवश्यक है, क्योंकि संस्कृतिः संस्कृतान्विता।

आज जिस प्रदूषित पर्यावरण से समस्त संसार चित्रित है, उसके निवारणार्थ दयानन्द मठ में दयानन्द मठ में स्वामी जी प्रतिवर्ष बृहद यज्ञ जोकि अहर्निश चलता था, भी किया करते थे। आशा है कि यह परम्परा आगे भी चलती रहेगी। स्वामी जी का जीवन यज्ञमय था, त्यागमय था, यज्ञ की भान्ति ही सुगन्धित था, जिसका पूज्य स्मरण हम लोग अभी भी कर रहे हैं। इन सबके साथ आधुनिक शिक्षा की प्रासङ्गिकता को देखते हुए महर्षि दयानन्द आदर्श विद्यालय नर्सरी से बारहवी तक भी मठ की ओर से चलाया जा रहा है। स्वास्थ्य संवर्धन हेतु महर्षि दयानन्द प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र तथा धर्मार्थ नेत्र चिकित्सालय भी चलाए जा रहे हैं। इस प्रकार सांसारिक ऐषणाओं को छोड़कर भी यह पूज्य परिव्राट आजीवन लोकोपयोगी कार्यों में लगा रहा।

यह लोकधर्म है कि अच्छे कार्य, विशेषकर लोकोपयोगी कार्य करते हुए व्यक्ति में मन में अहंकार भी पनप जाता है जिस कारण वह अपने आप को अन्यों से श्रेष्ठ समझने लगता है। स्वामी सुमेधानन्द जी इस से पूर्णतः थे। मठ के द्वारा चलाए जाने वाले इतने कार्यों के साथ–साथ स्वामी जी ने आर्य समाज के संगठन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कैप्टन देवरत्न जी के सार्वदेशिक का प्रधान बन जाने पर दौर्भाग्य से आर्यों में उपजी फूट तथा वैमनस्य को दूर करने के लिए स्वामी जी की अध्यक्षता में ही एकता समिति बनी। संयोजक के रूप में मुझे भी उसमें रहने का अवसर मिला तो मैंने देखा कि आर्यों का स्वार्थ तथा पदलिप्सा इतनी बढ़ गयी है कि किसी श्रेष्ठ संन्यासी का आदेश शिरोधार्य करना भी उनके लिए सहय नहीं है। सबके अपने अपने तथा स्वार्थ थे। बात कहने में और होती थी तथा मन में और। इसीलिए समिति को असफल होना ही था। एक घड़े द्वारा सर्वथा अवान्छित तरीके से सार्वदेशिक पर कब्जा करने के उपरान्त भी स्वामी जी को समन्वय समिति का अध्यक्ष बनाया गया। विशुद्ध हृदय स्वामी जी उनकी बातों में आ गये, किन्तु परिणाम क्या होना था, जबकि मेरे मन कुछ और है, विधना के मन कुछ और। इन पहलुओं ने ऐसे सन्त को भी चक्कर में डाले रखा, यह आश्चर्य था।

अस्तु आर्य समाज तो वहीं है जहां स्वामी जी के सामने था, हम भी वहीं हैं। बस, एक हंस विधना इस सरोवर को छोड़कर उड़ गया तथा ऐसा उड़ा कि अब वापिस नहीं आएगा। कवि कहता है

हानिस्तु तेषां हि सरोवराणां येणां मरालैः सह विप्रयोगः।

जहां से मराल हंस उड़ जाते हैं, उन सरोवरों की हानि ही होती है। आर्य समाज से भी ऐसे हंस बिछुड़ रहे हैं। नये नहीं आ रहे हैं। स्वामी जी भी चले गये किन्तु, 'कीर्तिर्यस्य स जीवति'। वे अपने उदात्त स्वभाव से, अपने उज्ज्वल यश से, अपने सन्त स्वरूप से आज भी हमारे मध्य विराजमान हैं। बिना लाग लपेट, छल प्रपञ्च से दूर, दयानन्द भक्त इनको सच्चे संन्यासी के रूप में स्वामी सुमेधानन्द जी आज भी हमारे मध्य में विराजमान हैं। नास्ति तेषां यशः काये जन्ममरणजं भयम्। उनकी प्रथम पुण्यतिथि पर स्वामी जी को श्रद्धापूर्वक नमन। स्वामी जी के सम्बन्ध में निम्न श्लोक उपयुक्त ही है–

वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधायुक्तो वाचः।
करणं परोपकरणं करणाम् ऐषां केषां नः ते वन्द्याः।।

Arya Vandana/Sml/L33/Sm/64/2000

Postal Registered No. : MANDI (HP)/21/2013-15
Valid upto 31-12-2018

सेवा में

बुक पोस्ट

'महान् याज्ञिक' स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज

•आचार्य अमर सिंह आर्य, प्रधान, संस्कृत शिक्षक परिषद्, जिला चम्बा हि.प्र.। फोन : ९८०५४–४१५६३

श्री भैरव दत्त खण्डूरी के घर, नन्हा बालक आया था।
प्यारे रमेश खण्डूरी जी, श्रीमती रूपन का जाया था।।
दयानन्द मठ दीनानगर में, प्रिय गोपाल उसे बनाया था।
अपनी कार्य कुशलता से, स्वामी जी को हर्षाया था।।
स्वामी सर्वानन्द जी ने, सोने को कुन्दन बनाया था।
रमेश को संन्यास दिलाकर सुमेधानन्द कहाया था।।
चम्बा की इस धरती को, पावन करने आया था।
रावी के सुरम्य तट को, तपः स्थली बनाया था।।
पूज्यपाद गुरूदेव को, चम्बा इतना भाया था।
फिर पीछे मुड़कर न देखा,
सचमुच माँ गायत्री का जाया था।।
जब चम्बा में पदार्पण किया, यहां पर न ठौर ठिकाना था।
छोटी सी कुटिया थी, वहाँ पर कैसे रहना था।।
स्वामी जी ने हमें सुनाया था,
बिना सब्जी का भोजन खाया था।
पहली बार खिचड़ु यहां बनाया था,
दिल में अरमान लिए खाया था।।
एक बार इस धरती को, भारत में चमकाना है।
बड़े–बड़े यज्ञ रचाकर, वेदों का परचम फहराना है।।
संस्कृत महाविद्यालय चलाकर, गरीबों का उद्धार किया।
भेदभाव को दूर भगा कर, समता का प्रचार किया।।
हरिजन हो या ब्राह्मण हो, सब को गले लगाते थे।
जात–पात के बन्धन को, सदा दूर भगाते थे।।
बसुधैव कुटुम्बकम् की भावना से, हमेशा भावित रहते थे।
असंख्य हरिजनों को वेद पढ़ाकर, वेदों का प्रचार कराते थे।।
सरस्वती और महावीर जी, जैसे उनकी छाया थी।
बड़े–बड़े यज्ञ रचाये, मॉं गायत्री की माया थी।।
महावीर तो सचमुच उनके नन्दी थे,
मठ के लिए सदा बन्दी थे।
श्रदेव शिवजी के गणों जैसे, मानो स्वामी जी के सम्बन्धी थे।।
कृष्ण और अर्जुन की यह जोड़ी थी,
वेद प्रचार के लिए होड़ा–होड़ी थी।
जो जिस्म और एक जान बना कर,
भावना किसी की नहीं तोड़ी थी।।
सम्वत जब १६८६ आया, सवा करोड़ गायत्री यज्ञ रचाया।
पूरे भारत से जनमानस आया,
सुमेधानन्द गायत्री पुत्र कहलाया।।
महान याज्ञिक कहाँ चुप रहते थे, दिन–रात सोचते रहते थे।
अब सम्वत् १६६४ आया, एक वर्ष का महायज्ञ रचाया।।
निर्विघ्नता से यज्ञ सम्पन्न कराया,
आर्य समाज का परचम फहराया।
महाभारत के बाद यह पहला मौका था,
देवों ने भी नहीं उन्हें रोका था।।
वेदों में दुर्लभ यज्ञ बतलाया, शारद यज्ञ जो कहलाया।
दिन–रात के इस अनुपम यज्ञ से,
वातावरण को सुन्दर बनाया।।
चिकित्सालय हो या विद्यालय हो, स्वामी जी के पौधे हैं।
जो अब सुन्दर खुशबू देते, शायद कभी हंसते कभी रोते हैं।।
अन्त समय की हम बात बताएं
उनकी भावना को क्या समझाएं।
सब बन्धन को वो तोड़ चुके थे,
'ओ३म्' से नाता जोड़ चुके थे।।
यज्ञ ही यज्ञ वो करते रहते थे,
यज्ञ को कल्पतरू बतलाते थे।
यज्ञ में ही जीना यज्ञ में ही मरना था,
इसके बिना कुछ नहीं करना था।।
सूरज अब छुपने वाला था,
किस को पता क्या होने वाला था।
सब ने कुछ न कुछ खोया था,
सारा जहां सिर पकड़ का रोया था।।
'अमर' पर तो पिता सा साया था,
न जाने कब ऐसा कर्म कमाया था।
सुमेधानन्द सा गुरू नहीं मिल पाएगा,
जो उन्हें भुलाएगा, जीते जी मर जाएगा।।
हम को उनके पद् चिन्हों पर चलना होगा,
दयानन्द मठ को सुरक्षित रखना होगा।
आचार्य महावीर जी का साथ देकर,
उनके सपनों को पूरा करना होगा।।
आत्मा कभी नहीं मरा करती,
वेद गीता की यह वाणी है।
कब कौन यहाँ किस रूप में आए,
आर्यों की यह रीत पुरानी है।।
साधु थे, सन्त थे, देव थे, सुखदेव थे,
क्या बताएं वे तो साक्षात् धर्मदेव ही थे।
क्षण में रूष्ट, क्षण में तुष्ट वासुकी देव थे,
''अमर''मेरे लिए तो साक्षात् ही महादेव थे।।